International Journal of Applied Research 2019; 5(6): 112-117

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(6): 112-117
www.allresearchjournal.com
Received: 28-04-2019
Accepted: 29-05-2019

डॉ. वंदना यादव
शोध छात्रा, हिंदी विभाग,
महात्मा गांधी काशी
विद्यापीठ वाराणसी,
उत्तर प्रदेश, भारत

Correspondence
डॉ. वंदना यादव
शोध छात्रा, हिंदी विभाग,
महात्मा गांधी काशी
विद्यापीठ वाराणसी,
उत्तर प्रदेश, भारत

रघुवीर सहाय के काव्य में अभिव्यक्त अस्मिता बोध का संकट

डॉ. वंदना यादव

रघुवीर सहाय का पूरा रचना कर्म व्यक्ति के वजूद और उसके संघर्षों की पुनर्व्याख्या ही है। एक तरफ जहाँ वे नव निर्मित भारतीय लोकतंत्र में आम आदमी की अस्मिता की तलाश करते हैं वही दूसरी ओर अलग-अलग श्रेणियों में रूपाकार ग्रहण करती हुई नई अस्मिता को लेकर भी सजग हैं। जिनमें स्त्री, दलित, आदिवासी प्रमुख है। इन सारी अस्मिताओं का संघर्ष अंततः एक बेहतर लोकतंत्र की तलाश ही है- जहाँ सब कह सकें, सुन सके, जी सकें।

अस्मिता का प्रश्न व्यक्ति के जन्म के साथ उत्पन्न होता है। यह आधुनिक मनुष्य की सबसे ज्वलंत समस्या है। मध्यकाल में अस्मिता का प्रश्न उत्पन्न नहीं हुआ था क्योंकि मध्यकाल में समाज प्रमुख था व्यक्ति नहीं। मध्यकाल का मनुष्य समाज पर तथा समाज मनुष्य पर पूर्णतः आश्रित था। उस समय आदर्श समाज की स्थापना पर बल दिया जाता था, व्यक्ति का परिष्कार उस काल में महत्वपूर्ण नहीं था। मध्यकाल में समाज को तथा आधुनिक काल में व्यक्ति को प्रधानता देने पर भी दोनों में एक समानता रही है, वह है - संघर्ष की। पूर्व मध्यकाल में समाज को परिष्कृत करने हेतु संघर्ष किया गया और आधुनिक काल में व्यक्ति अस्मिता अर्थात् व्यक्ति को उसकी पहचान दिलाने के लिए युद्ध स्तर पर संघर्ष किया गया।

आधुनिक काल में रघुवीर सहाय के काव्य में जो व्यक्ति अस्मिता सम्बन्धी चिन्तन मिलता है वह अन्य सभी साहित्यकारों से सर्वथा भिन्न है। उनके काव्य में न अज्ञेय जैसा अहंवादी व व्यक्तिवादी मानव है और न ही मुक्तिबोध की तरह आत्मनिर्वासित व्यक्ति। उन्होंने अपने चिन्तन का विषय मानव व्यक्तित्व के किसी एक पक्ष को नहीं बनाया अपितु उसके सम्पूर्ण जीवन का आकलन किया। उन्होंने व्यक्ति को उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व में जाँचा परखा।

व्यक्ति के जीवन का निर्माण अनेक प्रकार की अनुकूल तथा प्रतिकूल परिस्थितियों द्वारा होता है। उन सभी परिस्थितियों को रघुवीर सहाय ने अपनी दृष्टि के केन्द्र में रखा। उन्होंने व्यक्ति को कहीं विपरीत परिस्थितियों की मार से पराजित होता दिखाया है तो कहीं उनके विरुद्ध संघर्ष करता। उन्होंने अपने काव्य में व्यक्ति के छोटे से छोटे दुःख और दर्द को वाणी दी हैं। विभिन्न परिस्थितियों के घर्षण से व्यक्ति की कुचलती हुई अस्मिता को उन्होंने अपने सशक्त काव्य के माध्यम से काया प्रदान की है। व्यक्ति अस्मिता के निर्माण हेतु सभी आवश्यक तत्वों का निरीक्षण उनकी पारखी नजर ने किया है। वे व्यक्तिवाद की परिधि में बैठकर व्यक्ति अस्मिता के सम्बन्ध में बात नहीं करते अपितु वे तो व्यक्तिवादी सीमाओं को तोड़ देना चाहते है - मैं, तुम, यह, वह - / मन के चारों कोने - / और व्यक्ति की ये सीमाएँ- / कम टूटेगी?"[1] इस प्रकार रघुवीर सहाय व्यक्ति के अस्मिता संबंधी प्रश्न पर अपने काव्य का व्यापक फलक प्रदान करते है। रघुवीर सहाय के यहाँ व्यक्ति-अस्मिता के विविध धरातल है। जो निम्न है -

1947 के पूर्व जब भारत एक परतंत्र देश था, भारतीय व्यक्ति की अस्मिता घोर संकट में थी। उसे न ही शिक्षा का अधिकार था न भाषण का। वह न विरोध कर सकता था न विद्रोह। अंग्रेजी सत्ता ने भारत पर इस प्रकार आधिपत्य स्थापित किया था कि भारतीय व्यक्ति अपनी अस्मिता के विषय में सोचने योग्य नहीं था। भारतीय विडम्बना यह है कि परतंत्र भारत में तो व्यक्ति-अस्मिता प्रश्न-चिन्ह के घेरे में थी किन्तु स्वतंत्र भारत में वह और अधिक संकट में पड़ गयी। स्वतंत्र भारत में जब सबको भाषण देने और अपने विचार प्रकट करने का अधिकार प्राप्त हुआ तो प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को दूसरे पर थोपने की चेष्टा करने लगा। कभी अपने विचारों की बेड़ियों द्वारा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की अस्मिता को बाँधने का प्रयास किया तो कभी अपने कर्मों द्वारा। एक व्यक्ति द्वारा किसी दूसरे व्यक्ति की प्रतिभा पर ध्यान देने की अपेक्षा दूसरे के समक्ष सदा अपनी प्रतिभा का प्रस्तुतीकरण व्यक्ति-अस्मिता का नाशक बनता गया। ऐसी अवस्था में रघुवीर सहाय ने एक ऐसे व्यक्ति को अपने काव्य में प्रतिष्ठित किया जो अपने आप में स्वतंत्र भारत में परतंत्र व्यक्ति-अस्मिता की सच्ची व स्पष्ट तस्वीर था। बदलते हुए स्वतंत्र भारतीय समाज से सहाय जी इतने पीड़ित थे कि उन्होंने आजादी के केवल तीन वर्ष पश्चात् सन् 1950 में एक कविता लिखी - 'इतने में किसी ने'। इस कविता में उन्होंने समाज को 'मैं' के मार्ग का बाधक मानते हुए लिखा - 'पता नहीं क्यों यह समाज व्यवधान/तुला है करने पर मेरी बरबादी/मेरी प्रतिभा का कहा मान नहीं, छि यह/नवयुग आजादी का, नवयुग की आजादी।[2] समाज को व्यक्ति अस्मिता के मार्ग का काटा मानने का अर्थ यह कदापि नहीं है कि रघुवीर सहाय व्यक्तिवादी थे और समाज से उनका कोई सरोकार नहीं था। वे समाज के सच्चे पक्षधर थे यही कारण है कि वे जनवादी कवि के रूप में जाने जाते हैं। किन्तु वे ऐसे सामाजिक विचारों को ग्रहण नहीं कर सकते थे जो व्यक्ति की पहचान पर एक मोटी परत चढ़ा दे कि व्यक्ति उन्हें आजीवन धो धोकर भी अपनी अस्मिता को मुक्त न कर सके - आखिर कब तक यू ही धोता रहूगा मैं। दूसरों के मैले विचारों की लादी।[3]

रघुवीर सहाय स्वाधीन भारत में व्यक्ति की स्थिति एक तोते के समान मानते है। सत्ताधारी वर्ग तथा सामान्य वर्ग में बँटा समाज सामान्य

[1] एकोऽहबहुस्याम दूसरा सप्तक - रघुवीर सहाय, संपा. सुरेश शर्मा, रचनावली भाग-1, पृ. 45.

[2] इतने में किसी ने - सीढ़ियों पर धूप में, रघुवीर सहाय रचनावली भाग-1, संपा. सुरेश शर्मा, पृ. 58.

[3] वही, पृ. 57-58.

वर्ग के व्यक्ति की अस्मिता को अपने पैरों की धूल से अधिक और कुछ नहीं मानता और विडंबना यह है कि निम्नवर्ग का व्यक्ति भी अपनी अस्मिता का प्रश्न उठाना नहीं जानता। सामान्य व्यक्ति एक तोते के समान है। जिस प्रकार किसी तोते को उसका स्वामी जो कुछ रटाता है, वह उसका अर्थ समझे बिना उसे रटता चला जाता है। उसी प्रकार सामान्य वर्ग का निर्धन व्यक्ति भी उच्च वर्ग या शासक वर्ग के निर्देशों को बिना जाने-समझे अपने हित-अहित से अनभिज्ञ रहकर, उसका पालन करता रहता है - 'अगर कहीं मैं तोता होता। तोता / होता, फिर क्या? होता क्या? मैं तोता होता / तोता तोता तोता तोता / तो तो तो ता ता ता / बोल पट्ठे सीताराम।[4]

वह भूल जाता है कि मैं भी व्यक्ति हूँ और मेरी अपनी अलग पहचान है। मेरी भी कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जो और किसी के पास नहीं क्योंकि अत्याचारी वर्ग शोषित वर्ग के व्यक्ति को इस तुच्छ भावना का शिकार बना देता है कि वह निकृष्ट है और वह केवल उतना ही कर सकता है जितना करने के लिए उसे कहा जाए। इससे अधिक अथवा अलग कुछ करने का न उसके पास शक्ति है और न ही सामर्थ्य। ऐसा व्यक्ति अपने जीवन को निरर्थक ही सोचता रहता है। रघुवीर सहाय की कविताओं का व्यक्ति सशक्त नहीं है। वे या तो अपने व्यक्ति की अस्मिता के प्रति जाग्रत करते हुए दिखाई देते है या फिर खण्डित अस्मिता के व्यक्ति का चित्र उकेरते हुए - 'अब देखो बाजार में एक ढेर है चिथड़ों का / और एक मैं हूँ कि जिसके चिथड़े सब जगह एक जगह नहीं है / मैं चिथड़े चिथड़े हो गया हूँ / यही मेरी पहचान है / चिथड़ा-चिथड़ा मैं।'[5]

वे अपने चिथड़ों को तोड़ना चाहते है अर्थात् खण्डित अस्मिता के विविध पक्षों को जोड़कर सम्पूर्ण अस्मिता का निर्माण करना चाहते है। वे न केवल व्यक्ति की खण्डित अस्मिता को अपने काव्य के माध्यम से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते है अपितु व्यक्ति अस्मिता को खण्डित करने वाले अनैच्छिक तत्वों तथा भयानक परिवेश का चित्रण करते है। जहाँ एक ओर व्यक्ति पर राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा वैचारिक दबाव डाले जाते है और उसकी अस्मिता को खण्ड-खण्ड कर दिया जाता है वहीं दूसरी ओर उसका उपहास भी किया जाता है - सोचिए / बताइये। आपको अपाहिज होकर कैसा लगता है।[6] इस एक पंक्ति से जहाँ खण्डित अस्मिता वाले व्यक्ति की दयनीय स्थिति तो स्पष्ट होती ही है वहीं उसकी अस्मिता की धज्जियाँ उड़ा देने वाले अत्याचारी वर्ग की दुष्प्रवृत्तियाँ भी हमारे सामने आती है।

राष्ट्रगान स्वतंत्र भारत में प्रत्येक भारतीय के लिए सम्मानसूचक है किन्तु यह रघुवीर सहाय के लिए प्रश्न सूचक बन जाता है - 'राष्ट्रगीत में भला कौन वह / भारत भाग्य विधाता है / फटा सुथन्ना पहले जिसका / गुन हरचरना गाता है।[7] अर्थात् स्वतंत्र भारत में व्यक्ति अभी भी परतंत्र है, क्योंकि वह परिस्थितियों का दास है, क्योंकि वह लीक पर चलता है, वह निश्चित परिपाटी का गुलाम है क्योंकि वह अपना मार्ग स्वयं नहीं चुन पा रहा है, इसीलिए वह अपनी अस्मिता को नहीं खोज पा रहा हैं

[4] अगर कहीं मैं तोता होता, सीढ़ियों पर धूप में, रघुवीर सहाय रचनावली, पृ. 62.

[5] चिथड़ा-चिथड़ा मैं, लोग भूल गए है, रघुवीर सहाय रचनावली भाग-1, पृ. 240.

[6] कैमरे में बंद अपाहिज, लोग भूल गए है, वही, पृ. 246.

[7] अधिनायक - आत्महत्या के विरुद्ध, वही, पृ. 111.

रघुवीर सहाय नारी अस्मिता के प्रति अत्यंत सजग रहे। उन्होंने अपने काव्य में नारी पर विशेष चिंतन किया क्योंकि उसकी अस्मिता के प्रति विशेष रूप से चिंतित थे। पुरुष सत्ता द्वारा प्रताड़ित नारी अपनी अस्मिता को किस प्रकार खोती जाती है इसका विस्तृत वर्णन सहाय जी के काव्य में मिलता है। प्राचीन काल से समाज में नारी अपनी योग्यता को परिष्कृत कर अपनी विशिष्ट पहचान नहीं बना सकी क्योंकि उसे ऐसा करने का अवसर नहीं मिला और आधुनिक काल में वह अपनी विशिष्टताओं तथा योग्यताओं का परिष्कार करने हेतु प्रयासरत है। इसके लिए वह अधिक से अधिक वह शिक्षित होना चाहती है ताकि अपने अधिकारों के प्रति सजग व जाग्रत हो सके और पुरुषवादी सामाजिक व्यवस्था से टक्कर ले सके। सामंती मानसिकता वाले परिवार में पारिवारिक दबाव, पुरुष का अहं तथा अन्य प्रकार की परिस्थितियाँ आदि एक साथ मिलकार उसे इस प्रकार प्रताड़ित करते हैं कि वह अपनी अस्मिता के विषय में सोचने के योग्य नहीं रह पाती। पारिवारक परिधि में रहने वाली नारी की अस्मिता किस प्रकार खण्ड-खण्ड हो जाती है, यह सहाय रचित इन पंक्तियां में स्पष्ट हो जाता है - पढ़िए गीता / बनिये सीता / फिर इन सब में लगा पलीता / किसी मूर्ख की हो परिणीता / निज घर बार बसाइये / होंय कँटीली / आँखे गीली / लड़की सीली, तबियत ढीली / घर की सबसे बड़ी पतीली / भरकर भात पसाइये।'[8]

रघुवीर सहाय के यहाँ नारी प्रताड़ित होते हुए भी अपनी अस्मिता बनाए रखती है। वह अपने आप अत्याचारों का चेहरा दर्शाती है जुल्मों की कहानी कहती है। 'दयावती का कुनबा' नामक कविता में रघुवीर सहाय औरत की पहचान को कुछ ही शब्दों में चित्रित कर देते है। उसके सम्पूर्ण जीवन का लेखा-जोखा वे महज एक कविता में प्रस्तुत करते है। नारी चाहे स्वयं को परिष्कृत करके समाज में अपना स्थान बना ले किंतु फिर भी उसके जीवन का केवल इतना-सा सच है कि वह अपने पिता के घर से होकर अपने पति के घर जाती है तथा अपने ससुराल वालों की सेवा-सुश्रुषा में अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत कर देती है। वह अपनी इच्छाओं तथा आकांक्षाओं को कुचलकर स्वयं को ससुराल वालों के स्वभाव व इच्छा के अनुसार ढाल लेती है। संतान को जन्म देती है तथा उसके पालन-पोषण में सम्पूर्ण जीवन अर्पित कर देती है। एक माँ, एक पत्नी, पुत्री तथा बहन के रूप में उसकी अस्मिता जीवित है। किन्तु एक नारी केवल एक नारी के रूप में यदि वह अपनी अस्मिता प्राप्त करना चाहती है तो चारों ओर से सैकड़ों प्रश्न उठ खड़े होते है।

नाम व्यक्ति की सबसे बड़ी पहचान है। व्यक्ति सबसे पहले अपने नाम से जाना जाता है अपनी आवश्यकताओं, विचारों, रूचियों, संस्कारों, भावनाओं आदि से बाद में। रघुवीर सहाय के काव्य में कई व्यक्ति मुख्य पात्र बनकर सामने आते है - रामलाल, मैकू, रामगुलाम, पंडित राजाराम, राम मोहन, गीता, खुशीराम, रामदास, दयावती आदि। ये आम व्यक्ति कविता के पात्र बनकर आते है। रघुवीर सहाय से पहले कविताओं में पौराणिक या ऐतिहासिक पात्र ही आते थे जबकि रघुवीर सहाय की कविता में आम जन मुख्य पात्र है उनकी कविता का रामदास एक सामान्य व्यक्ति है जो आततायी सत्ता से भयभीत है। वह जानता है कि आज उसकी हत्या होगी किंतु आत्मरक्षा में वह कुछ नहीं कर सकता। यह रामदास जहाँ एक ओर नाम की महिमा से मण्डित व्यक्ति है वही दूसरी ओर ऐसे तमाम व्यक्तियों की अस्मिता को चरितार्थ करता है, 'जिन्हें पता है कि उनकी हत्या होगी - चौड़ी सड़क गली पतली थी / दिन का समय घनी बदली

[8] पढ़िये गीता, सीढ़ियों पर धूप में, रघुवीर सहाय, रचनावली भाग-1, संपा. सुरेश शर्मा, पृ. 79.

थी / रामदास उस दिन उदास था / अंत समय आ गया पास था / उसे बता यह दिया गया था उसकी हत्या होगी।'[9]

इसी तरह एक दूसरी कविता 'गिरीश की मृत्यु' भी नाम के महत्व को प्रतिपादित करती है। जब सत्ता शराफत का नकाब ओढ़कर जनता को ठगती है तो व्यक्ति की अस्मिता जर्जर होती है। सोचना, विचार-विमर्श करना और तत्पश्चात् निर्णय लेना व्यक्ति का लक्षण है। अन्यायकारी राजनीति ऐसी चाल चलती है कि जो व्यक्ति वैचारिक धरातल पर उतरने का प्रयास करता है। उसकी हत्या कर दी जाती है। सहाय जी की कविता में भ्रष्ट प्रशासन के विरुद्ध लड़ते-लड़ते मर जाने वाला गिरीश है - गांव-गांव में दिया / जन-जन को / विश्वास / नेकराम नेहरू ने / कि अन्याय आराम से हेगा आम राय से होगा नहीं तो / कुछ नहीं होगा / गाँव का / उसी दिन बुढ़ढो की तरह नहीं मरा मेरा बाप ! लड़ते-लड़ते मरा / बिना दवा के नहीं बिना सिफारिश के / ट्रक से टकराकर / छिटकर गिरीश गिरा हलवाई समिति ने / जहाँ तक सड़क पर पारपथ नहीं / खुलवाया / वहीं।'[10]

सहाय जहाँ एक ओर अपनी लेखनी से ऐसे व्यक्ति का चित्र उकेरते है जो संसार के चक्रव्यूह में फंसकर अपनी अस्मिता गवां चुका है वहीं दूसरी ओर वे अपनी रचनाओं से ऐसे व्यक्ति में प्राण फूक देना चाहते है जो व्यवस्था के मारे है। सहाय का व्यक्ति अब उन कष्टों को नहीं सहेगा जिसका उसके जीवन से कोई संबंध नहीं - सहने का अर्थ नहीं हैं - सहते जाओ यही धर्म है यही / बचे रहने का रास्ता / हम प्रस्तुत है, आज्ञा में नतमस्तक नहीं।[11]

सहाय संकटग्रस्त व्यक्ति को अपने काव्य के माध्यम से जाग्रत करते है। वे मानते है कि अधिकार माँगने से नहीं छीनने से प्राप्त होता है। अगर व्यक्ति समाज में अपना विशिष्ट स्थान बनाना चाहते है तो उसे ढोंगी व्यवस्था तथा प्रतिकूल परिस्थितियों से लड़ना होगा। यदि वह व्यवस्था के वशीभूत होकर उससे अपनी अस्मिता की भीख माँगता रहेगा तो व्यवस्था उसे दबाती ही रहेगी। वह मानते है प्रत्येक व्यक्ति की अलग पहचान होती है। कोई अपने कर्मों द्वारा पहचाना जाता है तो कोई अपने गुणों द्वारा। सबकी अस्मिता के मापदण्ड भिन्न होते है किंतु यह निश्चित है कि प्रत्येक की स्वतंत्र अस्मिता होती है जिसकी सीमा का उल्लंघन करने का अधिकार किसी को नहीं है।

सहाय समाज के महत्व को स्वीकारते हुए केवल इतना सा सत्य प्रवाहित करते हैं कि सामाजिक जीवन के अतिरिक्त व्यक्ति का अलग जीवन है - वे समाज में रहते हुए भी उससे अलग है - 'मेरा एक जीवन है / उसमें मेरे प्रिय है, मेरे हितैषी है, मेरे गुरुजन है / उसमें मेरा अन्यतम भी हैं / पर मेरा एक और जीवन है / जिसमें मैं अकेला हूँ।'[12]

सहाय भीड़ से अलग है क्योंकि वह असहाय नहीं है, वे अपने कष्टों का कारण व निवारण भली-भाँति जानते हैं वे भीड़ से अलग होते हुए भी समाज में है क्योंकि उनकी कविता समाज को प्रेरणा प्रदान करती है। वे मनुष्य को सामाजिक इकाई मानते हुए भी अद्वितीय मानते है। अद्वितीय अर्थात् जिसके समान कोई अन्य न हो। रघुवीर सहाय समाज में रहकर भी भीड़ से अलग है। पूरे समाज का ध्यान रखने का अर्थ यह नहीं है कि वे भीड़ में सम्मिलित होना पसंद करते है। इस संबंध में वे कहते हैं - 'विराट भीड़ों के समाज को बदलने का आज सिर्फ एक ही साधन है। वह

---

[9] रामदास - हंसो हंसो जल्दी हंसो, रघुवीर सहाय रचनावली भाग-1, संपा. शर्मा (सुरेश), पृ. 169.

[10] गिरीश की मृत्यु, आत्महत्या के विरुद्ध, रघुवीर सहाय रचनावली भाग-1, पृ. 142-143.

[11] दाता तुम को क्या मतलब - सीढ़ियों पर धूप में, रघुवीर सहाय रचनावली भाग-1, संपा. शर्मा (सुरेश), पृ. 69.

[12] मेरा एक जीवन, सीढ़ियों पर धूप में, रघुवीर सहाय रचनावली भाग-1, पृ. 95.

है उस सत्ता का उपयोग जो समुदाय का एक-एक व्यक्ति अलग-अलग निर्णयों से कुछ हाथों में देता है। ... मैं इस साधन के अधिक से अधिक सही इस्तेमाल के लिए लड़े बिना नहीं रह सकता, पर इसका मतलब यह नहीं है कि मैं भीड़ का कायल हूँ।'[13] यही तो रघुवीर सहाय के सामान्य किंतु विशिष्ट व्यक्तित्व का चमत्कार है जो हिन्दी-साहित्य-जगत को आज भी निरन्तर अपनी स्मृति कराता रहता है।

इस तरह यह कहा जा सकता है कि रघुवीर सहाय न केवल व्यक्ति की चिन्ता करते है अपितु वे उसकी अस्मिता की भी चिन्ता करते है। यदि साहित्य-समाज का दर्पण है तो समाज भी साहित्य का प्रतिबिम्ब होता है। रघुवीर सहाय अपने व्यक्तित्व तथा अपने कृतित्व दोनों में व्यक्ति की अस्मिता के लिए लड़ते दिखाई देते है।

ग्रंथ सूची

1. सहाय, रघुवीर - रघुवीर सहाय रचनावली भाग-1, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2000.
2. सहाय, रघुवीर - रघुवीर सहाय रचनावली भाग-3, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2000.

[13] स्वतंत्रता के दिनों का संकट और मैं, लिखने का कारण, रघुवीर सहाय रचनावली भाग-3, संपा. सुरेश शर्मा, पृ. 47.